श्रीमद्भागवत रसिक कुटुंब

भगवान महादेव कृत श्रीकृष्ण स्तोत्रम्

यह स्तोत्र ब्रह्मवैवर्त महापुराण से लिया गया है, जिसमें स्वयं भगवान महादेव, श्रीकृष्ण की सर्वव्यापक, सर्वरूप और परम दिव्य महिमा का गान करते हैं।

श्रीमहादेव उवाच

परं(म्) ब्रह्म परं(न्) धाम, परं(ञ्) ज्योतिः(स्) सनातनम्।

निर्लिप्तं(म्) परमात्मानं(न्), नमामि सर्वकारणम् ।।१

अर्थ: मैं उस परम ब्रह्म, परम धाम, सनातन परम ज्योति, सभी कारणों के कारण, और संसार के सभी कर्मों से निर्लिप्त परमात्मा को नमस्कार करता हूँ।

स्थूलात्स्थूलतमं(न्) देवं(म्), सूक्ष्मात् सूक्ष्मतमं(म्) परम्।

सर्वदृश्यमदृश्यं(ञ्) च, स्वेच्छाचारं(न्) नमाम्यहम् ।।२

अर्थ: मैं उस ईश्वर को प्रणाम करता हूँ जो स्थूल में सबसे स्थूल और सूक्ष्म में सबसे सूक्ष्म है, जो दृश्य और अदृश्य दोनों है, और अपनी इच्छा से सब कुछ करता है।

साकारं(ञ्) च निराकारं(म्), सगुणं(न्) निर्गुणं(म्) प्रभुम्।

सर्वाधारं(ञ्) च सर्वं(ञ्) च, स्वेच्छारूपं(न्) नमाम्यहम् ।।३

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो साकार भी है, निराकार भी; सगुण भी है, निर्गुण भी; जो सबका आधार है और स्वयं सम्पूर्ण स्वरूप है, जो अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण करता है।

अतीव कमनीयं(ञ्) च, रूपं(न्) निरुपमं(वँ) विभुम्।

करालरूपमत्यन्तं(म्), बिभ्रतं(म्) प्रणमाम्यहम् ।।४

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जिसका रूप अत्यंत सुंदर, अनुपम और सर्वव्यापक है, और जो समय आने पर भयानक कराल रूप भी धारण करता है।

कर्मणः(ख्) कर्मरूपं(न्) तं(म्), साक्षिणं(म्) सर्वकर्मणाम्।

फलं(ञ्) च फलदातारं(म्), सर्वरूपं(न्) नमाम्यहम् ।।५

अर्थ: मैं उस सर्वरूप प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो स्वयं कर्म का रूप है, सब कर्मों का साक्षी है, और फल के साथ-साथ फल का दाता भी है।

स्रष्टा पाता च सं(म्)हर्ता, कलया मूर्तिभेदतः।

नानामूर्तिः(ख्) कलां(म्)शेन, यः(फ्) पुमां(म्)स्तं(न्) नमाम्यहम् ।।६

अर्थ: मैं उस पुरुषोत्तम को नमस्कार करता हूँ जो अपनी कलाओं और विभिन्न मूर्तियों द्वारा सृष्टि का सृजन, पालन और संहार करता है, और अनेक रूपों में प्रकट होता है।

स्वयं(म्) प्रकृतिरूपश्च, मायया च स्वयं(म्) पुमान्।

तयोः(फ्) परं(म्) स्वयं(म्) शश्वत्, तन्नमामि परात्परम् ।।७

अर्थ: मैं उस सनातन परमात्मा को नमस्कार करता हूँ जो स्वयं प्रकृति का रूप है, स्वयं पुरुष है, और प्रकृति-पुरुष दोनों से भी परे, परात्पर है।

स्त्रीपुन्नपुं(म्)सकं(म्) रूपं(यँ), यो बिभर्ति स्वमायया।

स्वयं(म्) माया स्वयं(म्) मायी, यो देवस्तं(न्) नमाम्यहम्।।८

अर्थ: मैं उस देव को नमस्कार करता हूँ जो अपनी मायाशक्ति से स्त्री, पुरुष और नपुंसक—सभी रूप धारण करता है; जो स्वयं माया है और स्वयं मायापति है।

तारणं(म्) सर्वदुःखानां(म्), सर्वकारणकारणम्।

धारणं(म्) सर्वविश्वानां(म्), सर्वबीजं(न्) नमाम्यहम्।।९

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो सभी दुखों से तारने वाला, सभी कारणों का कारण, संपूर्ण जगत का धारक और सबका बीज है।

तेजस्विनां(म्) रविर्यो हि, सर्वजातिषु ब्राह्मणः।

नक्षत्राणां(ञ्) च यश्चन्द्रस्, तं(न्) नमामि जगत्प्रभुम्।।१०

अर्थ: मैं उस जगत्पति को प्रणाम करता हूँ जो तेजस्वियों में सूर्य है, सभी प्राणियों में अग्नि है, और नक्षत्रों में चन्द्रमा है।

रुद्राणां(वँ) वैष्णवानां(ञ्) च, ज्ञानिनां(यँ) यो हि शङ्करः।

नागानां(यँ) यो हि शेषश्च, तं(न्) नमामि जगत्पतिम्।।११

अर्थ: मैं उस जगत्पति को प्रणाम करता हूँ जो रुद्रों में शंकर हैं, वैष्णवों में श्रेष्ठ हैं, ज्ञानियों में शिव हैं, और नागों में अनंत शेष हैं।

प्रजापतीनां(यँ) यो ब्रह्मा, सिद्धानां(ङ्) कपिलः(स्) स्वयम्।

सनत्कुमारो मुनिषु, तं(न्) नमामि जगद्गुरुम्।।१२

अर्थ: मैं उस जगद्गुरु को प्रणाम करता हूँ जो प्रजापतियों में ब्रह्मा हैं, सिद्धों में कपिलमुनि हैं, और मुनियों में सनत्कुमार हैं।

देवानां(यँ) यो हि विष्णुश्च, देवीनां(म्) प्रकृतिः(स्) स्वयम्।

स्वायम्भुवो मनूनां(यँ) यो, मानवेषु च वैष्णवः।

नारीणां(म्) शतरूपा च, बहुरूपं(न्) नमाम्यहम्।।१३

अर्थ: मैं उस बहुरूप प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो देवों में विष्णु हैं, देवियों में प्रकृति हैं, मनुष्यों में वैष्णव रूप हैं, और नारियों में शतरूपा हैं।

ऋतूनां(यँ) यो वसन्तश्च, मासानां(म्) मार्गशीर्षकः।

एकादशी तिथीनां(ञ्) च, नमामि सर्वरूपिणम्।।१४

अर्थ: मैं उस अखिलरूप प्रभु को नमस्कार करता हूँ जो ऋतुओं में वसन्त है, मासों में मार्गशीर्ष है, और तिथियों में एकादशी है।

सागरः(स्) सरितां(यँ) यश्च, पर्वतानां (म्) हिमालयः।

वसुन्धरा सहिष्णूनां(न्), तं (म्) सर्वं (म्) प्रणमाम्यहम्।।१५

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो नदियों में सागर हैं, पर्वतों में हिमालय हैं, और सहनशीलों में वसुंधरा हैं।

पत्राणां(न्) तुलसीपत्रं(न्), दारुरूपेषु चन्दनम्।

वृक्षाणां(ङ्) कल्पवृक्षो यस्, तं(न्) नमामि जगत्पतिम्।।१६

अर्थ: मैं उस जगत्पति को प्रणाम करता हूँ जो पत्रों में तुलसीपत्र हैं, काष्ठों में चन्दन हैं, और वृक्षों में कल्पवृक्ष हैं।

पुष्पाणां(म्) पारिजातश्च, शस्यानां(न्) धान्यमेव च।

अमृतं(म्) भक्ष्यवस्तूनां(न्), नानारूपं(न्) नमाम्यहम्।।१७

अर्थ: मैं उस प्रभु को नमस्कार करता हूँ जो पुष्पों में पारिजात हैं, अन्न में धान्य हैं, और भक्ष्य पदार्थों में अमृत हैं; जो अनेक रूप धारण करते हैं।

ऐरावतो गजेन्द्राणां(वँ), वैनतेयश्च पक्षिणाम्।

कामधेनुश्च धेनूनां(म्), सर्वरूपं(न्) नमाम्यहम्।।१८

अर्थ: मैं उस सर्वरूप प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो गजों में ऐरावत हैं, पक्षियों में गरुड़ हैं, और गायों में कामधेनु हैं।

तेजसानां(म्) सुवर्णं(ञ्) च, धान्यानां(यँ) यव एव च।

यः(ख्) केसरी पशूनां(ञ्) च, वररूपं(न्) नमाम्यहम्।।१९

अर्थ: मैं उस वररूप प्रभु को नमस्कार करता हूँ जो धातुओं में सोना हैं, अनाजों में जौ हैं, और पशुओं में सिंह हैं।

यक्षाणां(ञ्) च कुबेरो यो, ग्रहाणां(ञ्) च बृहस्पतिः।

दिक्पालानां(म्) महेन्द्रश्च, तं(न्) नमामि परं(वँ) वरम्।।२०

अर्थ: मैं उस परमश्रेष्ठ प्रभु को नमस्कार करता हूँ जो यक्षों में कुबेर हैं, ग्रहों में बृहस्पति हैं, और दिक्पालों में इन्द्र हैं।

वेदसङ्घश्च शास्त्राणां(म्), पण्डितानां(म्) सरस्वती।

अक्षराणामकारो यस्, तं(म्), प्रधानं(न्) नमाम्यहम्।।२१

अर्थ: मैं उस प्रधान प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो शास्त्रों में वेद हैं, विद्वानों में सरस्वती हैं, और अक्षरों में 'अ' हैं।

मन्त्राणां(वँ) विष्णुमन्त्रश्च, तीर्थानां(ञ्) जाह्नवी स्वयम्।

इन्द्रियाणां(म्) मनो यो हि, सर्वश्रेष्ठं(न्) नमाम्यहम्।।२२

अर्थ: मैं उस सर्वश्रेष्ठ प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो मन्त्रों में विष्णुमन्त्र हैं, तीर्थों में गंगा हैं, और इन्द्रियों में मन हैं।

सुदर्शनं(ञ्) च शस्त्राणां(वँ), व्याधीनां(वँ) वैष्णवो ज्वरः।

तेजसां(म्) ब्रह्मतेजश्च, वरेण्यं(न्) तं(न्) नमाम्यहम्।।२३

अर्थ: मैं उस वरेण्य प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो शस्त्रों में सुदर्शन चक्र हैं, रोगों में वैष्णव ज्वर हैं, और तेज में ब्रह्मतेज हैं।

निषेकश्च बलवतां(म्), मनश्च शीघ्रगामिनाम्।

कालः(ख्) कलयतां(यँ) यो हि, तं(न्) नमामि विलक्षणम्।।२४

अर्थ: मैं उस विलक्षण प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो बलवानों का बल हैं, शीघ्र गमन करने वालों का मन हैं, और समय का भी नियंता हैं।

ज्ञानदाता गुरूणां(ञ्) च, मातृरूपश्च बन्धुषु।

मित्रेषु जन्मदाता यस्, तं(म्) सारं(म्) प्रणमाम्यहम्।।२५

अर्थ: मैं उस सारस्वरूप प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो गुरुओं में ज्ञानदाता हैं, बन्धुओं में माता के समान हैं, और मित्रों में जन्मदाता हैं।

शिल्पिनां(वँ) विश्वकर्मा यः(ख्), कामदेवश्च रूपिणाम्।

पतिव्रता च पत्नीनां(न्), नमस्यं(न्) तं(न्) नमाम्यहम्।।२६

अर्थ: मैं उस पूज्य प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो शिल्पियों में विश्वकर्मा हैं, सुन्दर रूप वालों में कामदेव हैं, और पत्नियों में पतिव्रता के स्वरूप हैं।

प्रियेषु पुत्ररूपो यो, नृपरूपो नरेषु च।

शालग्रामश्च यन्त्राणां(न्), तं(वँ) विशिष्टं(न्) नमाम्यहम्।।२७

अर्थ: मैं उस विशिष्ट प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो प्रियजनों में पुत्ररूप हैं, मनुष्यों में राजा हैं, और यन्त्रों में शालग्राम हैं।

धर्मः(ख्) कल्याणबीजानां(वँ), वेदानां(म्) सामवेदकः।

धर्माणां(म्) सत्यरूपो यो, विशिष्टं(न्) तं(न्) नमाम्यहम्।।२८

अर्थ: मैं उस विशिष्ट प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो कल्याण के बीजों में धर्म हैं, वेदों में सामवेद हैं, और धर्मों में सत्यस्वरूप हैं।

जले शैत्यस्वरूपो यो, गन्धरूपश्च भूमिषु।

शब्दरूपश्च गगने, तं(म्) प्रणम्यं(न्) नमाम्यहम्।।२९

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो जल में शीतलता हैं, पृथ्वी में सुगन्ध हैं, और आकाश में शब्द हैं।

क्रतूनां(म्) राजसूयो यो, गायत्री छन्दसां(ञ्) च यः।

गन्धर्वाणां(ञ्) चित्ररथस् , तं(ङ्) गरिष्ठं(न्) नमाम्यहम्।।३०

अर्थ: मैं उस गरिष्ठ प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो यज्ञों में राजसूय हैं, छन्दों में गायत्री हैं, और गन्धर्वों में चित्ररथ हैं।

क्षीरस्वरूपो गव्यानां(म्), पवित्राणां(ञ्) च पावकः।

पुण्यदानां(ञ्) च यः(स्) स्तोत्रं(न्), तं(न्) नमामि शुभप्रदम्।।३१

अर्थ: मैं उस शुभदायक प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो दुग्ध में क्षीर हैं, पवित्र वस्तुओं में अग्नि हैं, और पुण्य दानों में स्तोत्र हैं।

तृणानां(ङ्) कुशरूपो यो, व्याधिरूपश्च वैरिणाम्।

गुणानां(म्) शान्तरूपो यश्, चित्ररूपं(न्) नमाम्यहम्।।३२

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो तृणों में कुश हैं, शत्रुओं में रोग के रूप में हैं, और गुणों में शान्तस्वरूप हैं।

तेजोरूपो ज्ञानरूपः(स्), सर्वरूपश्च यो महान्।

सर्वानिर्वचनीयं(ञ्) च, तं(न्) नमामि स्वयं(वँ) विभुम्।।३३

अर्थ: मैं उस स्वयं विभु प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो तेज का रूप हैं, ज्ञान का रूप हैं, सर्वरूप हैं, और जिसका वर्णन करना असम्भव है।

सर्वाधारेषु यो वायुर्, यथाऽऽत्मा नित्यरूपिणाम्।

आकाशो व्यापकानां(यँ) यो, व्यापकं(न्) तं(न्) नमाम्यहम्।।३४

अर्थ: मैं उस व्यापक प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो सभी आधारों में वायु हैं, नित्यस्वरूपों में आत्मा हैं, और व्यापक प्राणियों में आकाश के समान व्याप्त हैं।

वेदानिवर्चनीयं(यँ) यन्, न स्तोतुं(म्) पण्डितः(ह्) क्षमः।

यदनिर्वचनीयं(ञ्) च, को वा तत्स्तोतुमीश्वरः।।३५

अर्थ: जिसका वर्णन वेद भी नहीं कर सकते, जिसे पण्डित भी स्तुति नहीं कर पाते, उस अवर्णनीय प्रभु की स्तुति कौन कर सकता है?

वेदा न शक्ता यं(म्) स्तोतुं(ञ्), जडीभूता सरस्वती।

तं(ञ्) च वाङ्मनसोः(फ्) पारं(ङ्), को विद्वान्स्तोतुमीश्वरः।।३६

अर्थ: जिसकी स्तुति करने में वेद असमर्थ हैं, जहाँ सरस्वती भी मौन हो जाती है, उस वाणी और मन से परे प्रभु की स्तुति कौन कर सकता है।

शुद्धतेजस्स्वरूपं(ञ्) च, भक्ताऽनुग्रहविग्रहम्।

अतीव कमनीयं(ञ्) च, श्यामरूपं(न्) नमाम्यहम्।।३७

अर्थ: मैं उस श्यामसुंदर प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो शुद्ध तेज का स्वरूप हैं, भक्तों पर कृपा करने वाले हैं, और अत्यन्त मोहक रूप वाले हैं।

द्विभुजं(म्) मुरलीवक्त्रं(ङ्), किशोरं(म्) सस्मितं(म्) मुदा।

शश्वद्गोपाङ्गनाभिश्च, वीक्ष्यमाणं(न्) नमाम्यहम्।।३८

अर्थ: मैं उस द्विभुज किशोर को प्रणाम करता हूँ जिनके अधरों पर मुरली है, मुख पर मुस्कान है, और जो सदा गोपियों द्वारा निहारे जाते हैं।

राधया दत्तताम्बूलं(म्), भुक्तवन्तं(म्) मनोहरम्।

रत्नसिं(म्)हासनस्थं(ञ्) च, तमीशं(म्) प्रणमाम्यहम्।।३९

अर्थ: मैं उस ईश्वर को प्रणाम करता हूँ जिन्होंने राधा के द्वारा दिया गया ताम्बूल ग्रहण किया है और रत्नसिंहासन पर विराजमान हैं।

रत्नभूषणभूषाढ्यं(म्), सेवितं(म्) श्वेतचामरैः।

पार्षदप्रवरैर्गोप, कुमारैस्तं(न्) नमाम्यहम्।।४०

अर्थ: मैं उस प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो रत्नाभूषणों से अलंकृत हैं, श्वेत चामरों से सेवित हैं, और गोपकुमार पार्षद जिनकी सेवा में हैं।

वृन्दावनान्तरे रम्ये, रासोल्लाससमुत्सुकम्।

रासमण्डलमध्यस्थं(न्), नमामि रसिकेश्वरम्।।४१

अर्थ: मैं उस रसिकेश्वर को प्रणाम करता हूँ जो रमणीय वृन्दावन में रासोत्सव के लिए उत्सुक होकर रासमण्डल के मध्य में विराजमान हैं।

शतशृङ्गे महाशैले, गोलोके रत्नपर्वते।

विरजापुलिने रम्ये, प्रणमामि विहारिणम्।।४२

अर्थ: मैं उस विहारी प्रभु को प्रणाम करता हूँ जो गोलोक के रत्न पर्वत पर स्थित शतशृंग नामक महाशैल पर, विरजापुलिन के रमणीय तट पर विहार करते हैं।

परिपूर्णतमं(म्) शान्तं(म्), राधाकान्तं(म्) मनोहरम्।

सत्यं(म्) ब्रह्मस्वरूपं(ञ्) च, नित्यं(ङ्) कृष्णं(न्) नमाम्यहम्।।४३

अर्थ: मैं उस परिपूर्ण, शान्त, राधाकान्त, मनोहर, सत्य और ब्रह्मस्वरूप, नित्य श्रीकृष्ण को प्रणाम करता हूँ।

फलश्रुतिः

श्रीकृष्णस्य स्तोत्रमिदं(न्), त्रिसन्ध्यं(यँ) यः(फ्) पठेन्नरः।

धर्मार्थकाममोक्षाणां(म्), स दाता भारते भवेत्।।४४।।

जो मनुष्य इस श्रीकृष्ण स्तोत्र को त्रिकाल (प्रातः, मध्यान्ह, सायं) पढ़े, वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का दाता बनता है।

हरिदास्यं(म्) हरौ भक्तिं(लँ), लभेत्स्तोत्रप्रसादतः।

इह लोके जगत्पूज्यो, विष्णुतुल्यो भवेद्ध्रुवम्।।४५।

इस स्तोत्र के प्रसाद से हरिदास्य और भगवद्भक्ति प्राप्त होती है, और वह विष्णुतुल्य होकर जगत में पूजनीय बनता है।

सर्वसिद्धेश्वरः(श्) शान्तोऽप्, यन्ते याति हरेः(फ्) पदम्।

तेजसा यशसा भाति, यथा सूर्यो महीतले।।४६।।

वह सर्वसिद्धि का स्वामी, शांतचित्त होकर अंत में हरेः पद को प्राप्त करता है, और यश व तेज से सूर्य के समान प्रकाशित होता है।

जीवन्मुक्तः(ख्) कृष्णभक्तः(स्), स भवेन्नात्र संशयः।

अरोगी गुणवान्विद्वान्, पुत्रवान्धनवान्सदा।।४७।।

वह जीवन्मुक्त, गुणवान, विद्वान, आरोग्यवान, संतानवान और धनवान बनता है।

षड्विज्ञो दशबलो, मनोयायी भवेद्ध्रुवम्।

सर्वज्ञः(स्) सर्वदश्चैव, स दाता सर्वसम्पदाम्।।४८।।

कल्पवृक्षसमः(श्) शश्वद्, भवेत्कृष्णप्रसादतः।

इत्येवं(ङ्) कथितं(म्) स्तोत्रं(वँ), वत्स त्वं(ङ्) गच्छ पुष्करम्

तत्र कृत्वा मन्त्रसिद्धिं(म्), पश्चात्प्राप्स्यसि वाञ्छितम् ।।४९।।

त्रिस्सप्तकृत्वो निर्भूपां(ङ्), कुरु पृथ्वीं(यँ) यथासुखम्।
ममाऽऽशिषा मुनिश्रेष्ठ, श्रीकृष्णस्य प्रसादतः ।।५०।।

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे श्रीकृष्णस्तोत्रं(म्) सम्पूर्णम् ।।

ॐ पूर्णमदः(फ्) पूर्णमिदं(म्)पूर्णात्पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शान्तिः(श्)शान्तिः(श्)शान्तिः ॥